CHAPTER 42

MUSIC

Doctoral Theses

448. ARORA (Rachita)
Electronic Music Production : An Analysis.
Supervisors : Prof. Nupur Roy Chowdhury and Dr. Ojesh Pratap Singh
Th 22628

Contents

1. Introduction and history of electronic music production 2. Sound 3. Synthesis 4. Digital Recording 5. Sampling 6. Digital Audio workstation (DAW) 7. Virtual studio technology 8. Loudness war. Conclusion, appendix, glossary and bibliography.

449. कपूर (तरन्नुम)
रागदारी संगीत में मध्यकाल से वर्तमान काल तक बंदिश के अंतर्गत आधुनिक प्रवृत्तियाँ ख्याल तथा ठुमरी के विशेष संदर्भ में।
निर्देशिका : डॉ. सुधा माथुर
Th 22204

सरांश

प्रकृति का अभिन्न अंग परिष्कृत तथा अपरिष्कृत अपने दोनों रूपों में 'संगीत' अत्यन्त सौंदर्यमयी है। प्राकृतिक घटनाओं ने परिष्कृतहोतेहोते मानवता के विकास - के साथ शास्त्रीय संगीत का स्वरूप ले लिया। नाद से श्रुति, श्रुति से स्वर, स्वर से राग, राग से सरगमगीत, सरगम गीत से बंदिश तथा रागदारी संगीत एक नियमबद्ध संगीत के रूप में हमारे समक्ष प्रस्तुत होता गया। संगीतज्ञों की (शास्त्रीय संगीत) साधना, रियाज़त, द्वारा शास्त्रीय संगीत विकसित होता गया। मेरे शोध कार्य रागदारी) के अन्तर्गत आधुनिक प्रवृत्तियाँ 'बंदिश' संगीत में मध्यकाल से वर्तमान काल तक को सुविधानुसार पाँच अध्यायों में विभक्त (ख्याल तथा ठुमरी के विशेष संदर्भ में किया गया है। प्रथम अध्याय में विभिन्न विद्वानों तथा ग्रन्थों 'बन्दिश' तथा 'ख्याल' द्वारा रागाभिव्यक्ति को बताया गया है। द्वितीय अध्याय में (ख्याल) द्वारा बन्दिश द्वारा भावाभिक्ति 'ठुमरी', ठुमरी का ऐतिहासिक प्रारम्भ, ठुमरी के प्रकार, ठुमरी का साहित्यिक महत्त्व, कत्थक नृत्य से सम्बन्ध तथा ठुमरी के कुछ उदाहरणों सहित बताया गया है। तृतीय अध्याय में विशिष्ट घरानेदार रचनाकारों की साहित्यिक, तथा सांगीतिक विशेषताओं को बता कर कुछ अतिविशिष्ट रचनाएँ दी गई हैं। चतुर्थ अध्याय में विशिष्ट ख्याल तथा ठुमरी के रचनाकारों की अतिविशिष्ट रचनाएँ कुछ का

साहित्यिक तथा कुछ स्वरलिपि सहित दी गई हैं। पंचम अध्याय में शोध के निष्कर्ष रूप में रागदारी संगीत में रचनात्मक तथा साहित्यिक दृष्टि से रचनाओं में आए विशिष्ट परिवर्तनों को बताया गया है, कुछ कलाजीवियों से स्वयं साक्षात्कार करके उन विद्वानों द्वारा बताए विचारों का समावेश है। शोध का निष्कर्ष है, परिवर्तनों की श्रृंखला निरंतर गतिमान रहेगी। रागदारी संगीत में साधक की कलात्मक योग्यता, कल्पना की उड़ान, रियाज़त, शिक्षा आदि के अनुसार परिवर्तन होने स्वाभाविक हैं। वैदिक काल, मध्यकाल, वर्तमान काल पर दृष्टि डाली जाए बहुत सी भिन्नताएँ दृष्टिगोचर होती है। बन्दिशों में आध्यात्मिक, कहीं सरल, मध्यकाल में शृंगारिक, तथा वर्तमान में मिलाजुला रूप सामने आता है।

विषय सूची

1. राग अभिव्यक्ति का आधार बंदिश (ख्याल) 2. भावाभिव्यक्ति का आधार ठुमरी 3. वाग्येयकार (रचनाकार) 4. विशिष्ट रचनाकार तथा विशिष्ट रचनाएँ 5. संगीतिक दृष्टि से बंदिश (ख्याल) और ठुमरी में आए परिवर्तन। उपसंहार। चित्रावली। संदर्भ ग्रंथ सूची ।

450. गोस्वामी (पूजा)
हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत के संरक्षण में संगीत नाटक अकादेमी दिल्ली की भूमिका : एक अध्ययन।
निर्देशक : डॉ. शैलेन्द्र कुमार गोस्वामी
<u>Th 22208</u>

सरांश

आज़ादी के पश्चात् तमाम विषयों के साथ संगीत, गायनवादन-, नृत्य भी एक विषय के रूप में इक्केदुक्के संस्था-नों में कहींकहीं पढ़ाया जाने लगा। अनेक राजकीय स्नातक - एवं स्नातकोत्तर महाविद्यालयों की स्थापना हुई। संगीत शिक्षा को भी इनमें शामिल किया जाने लगा। इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु कई संस्थाओं की स्थापना की गई। संगीत नाटक अकादेमी कलाओं के उन्नयन प्रदर्शन और प्रसारण के लिए काम करने वाली महत्त्वपूर्ण संस्था के कामकाज से आज प्रायः सभी पीढ़ियों के रसिक जन और कला प्रेमी परिचित और लाभान्वित रहे हैं। मेरा शोध् कार्य हिंदुस्तानी शास्त्ाीय संगीत के संरक्षण में संगीत नाटक अकादेमी दिल्ली की भूमिका एक अध्ययनय् पर आधरित है, अकादेमी जो कि एक राष्ट्रीय अकादेमी है का उद्घाटन भारत के पहले राष्ट्रपति डाॅ राजेन्द्र प्रसाद द्वारा .26 जनवरी, 1953 को संसद भवन में आयोजित एक विशेष समारोह में किया गया। डाॅराजमन्नार इसके पहले चेयरमैन थे।संगीत .वी.पी . नाटक अकादेमी का मुख्य उद्देश्य नृत्य, गायन, वादन और नाटक आदि विभिन्न विधओं को प्रोत्साहित करना है। अपने शोध् कार्य के दौरान मुझे यह भी आभास हुआ

कि अकादेमी का कार्य क्षेत्रा काफी विस्तृत है। इसके सम्बन्ध् में सारी सूचनाएँ एकत्रित की गईं हैं। संगीत नाटक अकादेमी सन् 1952 से लेकर अब तक कई दिग्गज कलाकारों को पारितोषित किया जा चुका है। उन कलाकारों की सूची भी दी गई है जो गायन व वादन में संगीत नाटक अकादेमी द्वारा पुरस्कृत हैं। अकादेमी पुरस्कार देने के अतिरिक्त प्रकाशन, प्रलेखन व प्रदर्शन एवं उत्सव भी करवाती है ताकि संगीत का विस्तृत रूप से प्रचार व प्रसार हो सके।अपने शोधकार्य के समय मुझे सौभाग्यवश कुछ महान् कलाकारों से भेंटवार्ता करने का मौका मिला। संगीत नाटक अकादेमी के इतने वर्षों के सफल योगदान का विवरण दिया गया है।

विषय सूची

1. उच्च स्तरीय हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत के संरक्षण में संगीत नाटक अकादेमी दिल्ली : एक परिचय 2. संगीत नाटक अकादेमी दिल्ली की कार्य प्रणाली 3. संगीत नाटक अकदेमी से सम्मानित हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत के विभिन्न कलाकारों का संक्षिप्त जीवन परिचय 4. गायन तथा वादन से संबंधित कुछ कलाकारों का संक्षिप्त जीवन परिचय एवं भेंटवार्त्ता। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची एवं परिशिष्ट।

451. गोस्वामी (विनीत)
रागदारी संगीत में पं. विष्णु दिगम्बर पलुस्कर द्वारा भक्ति-रचनाओं का प्रयोग : अध्ययन एवं अभिलेखन।
निर्देशिका : प्रो. सुनीरा कासलीवाल व्यास
Th 22626

सरांश

जिस प्रकार संगीत संसार को बढ़ाने में पल्लवित करनेमें और उसको आने वाली पीढ़ी को सौंपने में नत्थन पीरबख्श संस्थापक के रूप स्मरण किए जाते हैं, वैसे ही पंबाल . विष्णु दिगम्बर पलुस्कर ने .कृष्ण बुवा इचलकरंजीकर के सुयोग्य शिष्य पंन केवल आने वाली पीढ़ी को वो संगीत सौंपा बल्कि जब संगीत भोग विलास की वस्तु बनकर रह गया था, मनोरंजन के लिए उसका प्रयोग सर्वविदित हो चुका था, सभ्य समाज अपने बच्चों को संगीत सीखने से बचाने लगे थे, संगीतकारों को समाज में उत्कृष्ट स्थान प्राप्त नहीं था, ऐसे समय में पण्डित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर ने भारतीय संगीत को एक नयी ऊँचाई दिलाई, उन्होंने पारम्परिक बंदिशों में जिनमें की बहुत सुन्दर स्वर संयोजन होता था, मगर शब्द दृष्टि से वो उत्कृष्ट नहीं थी उनमें भक्ति रस के पदों को पिरोकर जनसाधारण को भी रागदारी संगीत से जोड़ा। साथ ही साथ सैंकड़ों भक्ति पदों को रागदारी संगीत की लगभग सभी विधाओं में स्वरबद्ध किया। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में पंविष्णु दिगम्बर पलुस्कर जी द्वारा रागदारी संगीत में भक्ति रचनाओं .

का प्रयोग क्यों और किस प्रकार किया गया यह दर्शाने का प्रयत्न किया गया है व किस प्रकार उन्होंने भारतीय संगीत से विमुख हुए लोगों को फिर से संगीत प्रशंसक बनाया इस पर संक्षिप्त चर्चा करने का भी प्रयास किया गया है। पंपलुस्कर जी . द्वारा स्वरबद्ध एवं रामचरित मानस के कुछ दोहों का भातखंडे स्वरलिपि में अभिलेखन इस शोध प्रबन्ध में हुआ है।इन सभी स्वरलिपियों को पलुस्कर स्वरलिपि पद्धति से भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति में परिवर्तित किया गया है जिसके लिए दोनों ही स्वरलिपि पद्धतियों का सूक्ष्मता से अध्ययन किया गया। आशा है प्रस्तुत शोध-पलुस्कर जी के सांगीतिक जीवन के बारे में संगी .प्रबंध के द्वारा पंत समाज को अभूतपूर्व जानकारी प्राप्त होगी। पुनःश्च् पंजी की स्मृति को शाश्वत् .प.विष्णु दि . प्रणाम दण्डवत् प्रणाम्।

विषय सूची

1. पं. विष्णु दिगम्बर पलुस्कर जी की व्यक्तित्व एवं कृतित्व 2. भक्ति संगीत और पं. विष्णु दिगम्बर पलुस्कर 3. पं. विष्णु दिगम्बर पलुस्कर जी के रागदारी संगीत तथा उनके परिचालित भक्ति रचनाओं के प्रमुख गायक शिष्य 4. पं. विष्णु दिगम्बर पलुस्कर द्वारा स्वरबद्ध रचनाओं की स्वरलिपियाँ भातखण्डे पद्धति में 5. साक्षात्कार। उपसंहार। परिशिष्ट। संदर्भ ग्रंथ सूची ।

452. GAUR (Sugandha)
Media Art Revolution : Rise of New Age Media in Advertising.
Supervisor : Prof. S. N. Lahiri
Th 22629

Contents

1. Introduction 2. History of advertising 3. The saturation point 4. Dawn of media art 5. The revolution 6. The new age media marathon 7. Media art for a social cause 8. Industry speak 9. Conclusion. Glossary and bibliography.

453. चित्रा शंकर
प्रागैतिहासिक भारतीय चित्रकला में संगीत छवि की आलोचनात्मक विवेचना।
निर्देशिका : प्रो. अनुपम महाजन
Th 22210

सरांश

प्रागैतिहासिक चित्रकला वर्तमान युग में कला एवं इतिहास लेखन की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण पुरासम्पदा और सांस्कृतिक धरोहर के रूप में उभर कर सामने आई है। - प्रागैतिहासिक चित्रों की खोज19वीं शताब्दी के आठवें दशक में आकस्मिक रूप से हुई, इससे पूर्व इसका ज्ञान किसी को नहीं था।संगीत की प्रारंभिक अवस्था से अवगत

कराने वाले चित्र भारतीय संगीत के इतिहास में धंुधलेपन का आवरण ओढ़े हुए दिखाई देते हैं। वह किन कारणों से महत्त्व प्राप्त नहीं कर पाए, इस विषय के स्पष्टीकरण के उद्देश्य से शोध किया गया है। संगीत के अवयव तत्कालीन चित्रकला मंे मानवीय जीवन के लगभग सभी क्षेत्रों में दिखाई देते हैं। अतः विवेच्य चित्रों को एकल, युगल, सामूहिक वादन तथा नर्तन के आधार पर वर्गीकृत किया गया है। तत्कालीन मानव लेखन कला का ज्ञाता नहीं था, इसलिए गायन के संबंध में आकृतियों के खुले मुख के आगे बने छोटे गोले को गायन का संकेत बताया है। प्रागैतिहासिक चित्रों की व्यापकता को देखते हुए भारतीय संगीत के चतुर्विध वाद्योंतत्-, अनवद्ध, घन, सुषिर वाद्य रूपों से साम्य रखने वाले चित्रित वाद्य रूपों की आकार के आधार पर विवेचना की गई है। तथापि वर्तमान परिप्रेक्ष्य में इन चित्रों की अस्पष्ट मर्यादा के कारण मात्र चित्रित रूप के आधार पर प्राप्त वाद्य रूपों की प्रासंगिकता सिद्ध करना कठिन कार्य है। क्योंकि केवल वाद्यों के आकार से परिचित कराने वाले चित्र इनकी निर्माणसामग्री-, निर्माणविधि-, वाद्यों के नामों, वादनसामग्री-, वादनविधि जैसे प्रश्नों के - उत्तर में मौन दिखाई देते हैं। लेकिन इस कारणवश वर्तमान में उपलब्ध इन चित्रित वाद्य रूपों को उपेक्षित नहीं किया जा सकता। क्योंकि संगीत के उद्गम एवं विकसित स्वरूप को प्रमाण रूप में परखने के लिए यह चित्र ठोस माध्यम है। उपलब्ध चित्रों का अवलोकन तथा समीक्षात्मक अध्ययन करते हुए आलोचनात्मक दृष्टिकोण द्वारा संगीत के मूलभूत उद्गम विकास पर विचार करने का प्रयास किया गया।

विषय सूची

1. प्रागैतिहासिक शब्द की अर्थ-व्याप्ति एवं क्षेत्र 2. प्रागैतिहासिक युग-भारतीय चित्रकला एवं संगीत कला-अन्तःसंबंध 3. भारत के प्रागैतिहासिक शिलाचित्रों में प्राप्त सांगीतिक अवयव 4. प्रागैतिहासिक भारतीय शिलाचित्रों का विवेचनात्मक अध्ययन-वाद्यों के संदर्भ में 5. प्रागैतिहासिक भारतीय चित्रकला का अध्ययन वर्तमान परिप्रेक्ष्य में वाद्यों के संदर्भ में। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

454. जतिन कुमार

हिन्दी चित्रपट संगीत निर्देशन के क्षेत्र में आए परिवर्तन और उसमें नवीन तकनीकों का योगदान एवम् प्रभाव।

निर्देशिका : डॉ सुदीप्ता शर्मा

Th 22634

सरांश

हिन्दी चित्रपट संगीत निर्देशन एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें संगीत अपने विशुद्ध रूप में न रहकर चित्रपट कथा तथा उसके नायकभंगिमाओं के अनुरूप -नायिका की भाव-

सुनियोजित किया जाता है। हिन्दी चित्रपट संगीत निर्देशन के आरम्भिक चरण में फिल्म की पटकथा को आगे बढ़ाने के लिए गीतों की सहायता ली जाती थी तथा इस समय का संगीत पारसी, मराठी, पारम्परिक महफिलों और कोठों के संगीत से प्रभावित रहा। पाँचवें दशक में स्वत्रंता आंदोलन अपने चरमोत्कर्ष पर होने के कारण हिन्दी फिल्म संगीत को देशभक्ति की बहुत सारी रचनाएँ प्राप्त हुई। इस दशक का फिल्मी संगीत पारसी थियेटर की शैली से हट कर मेलोडी की और उन्मुख हुआ। छठे दशक का हिन्दी चित्रपट संगीत हाल में हुई प्राप्त स्वतंत्रता से उभरी नई अभिव्यक्तियों का संगीत बना। छठे तथा साँवतें दशक का संगीत लगभग एक जैसा ही रहा, क्योंकि जिन संगीत निर्देशकों ने छठे दशक में संगीत दिया, उनमें से लगभग सभी संगीत निर्देशक साँतवें दशक तक भी सक्रिय रहे। आँठवें दशक का संगीत घटती मेलोडी तथा बढ़ते शौर का पर्याय माना गया परन्तु नौवें दशक में डिस्को तथा रॉक के संयोजन से निकला संगीत मुख्य रहा। सदी के अन्तिम दशक में कुछ हद तक संगीत में मेलोडी की वापसी हुइ परन्तु सदी के दूसरे दशक तक संगीत का स्तर गिर गया कि चित्रपट संगीत अब मेलोडी की अपेक्षा डिजिटल साफ्टवेयरों तथा लूप्स से जनित पाश्चात्य रिद्मों का शौर बन कर रह गया। वर्तमान समय में रिकॉर्डिंग तकनीक में आए उन्नत परिवर्तनों के कारण चित्रपट संगीत मौलिक्ता से हट कर व्यवसायिक्ता का एक माध्यम बनता जा रहा है।इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि हिन्दी चित्रपट संगीत निर्देशन के क्षेत्र में महत्वपूर्ण परिवर्तन आए थे, आए हैं और भविष्य में भी आते ही रहेगें, जिनके कुछ अच्छे प्रभावों के साथसाथ कुछ बुरे प्रभावों को- भी नकारा नहीं जा सकता।

विषय सूची

1. आरम्भिक संगीत निर्देशक व उनकी कार्य शैली 2. छठे तथा सातवें दशक के कुछ प्रमुख संगीत-निर्देशक तथा उनकी शैली 3. आठवें दशक में हिन्दी चित्रपट संगीत निर्देशन की स्थिती तथा कुछ मुख्य संगीत निर्देशक 4. समकालीन संगीत निर्देशक तथा उनके संगीत की कार्यशैली 5. हिन्दी चित्रपट संगीत निर्देशन के क्षेत्र में नवीन तकनीक का योगदान एवं प्रभाव। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची ।

455. TYAGI (Radha)
Life & Work of Naushad : A Study and use of his Classical Music in Hindi Films (1937 - 2005).
Supervisor : Prof. Suneera Kasliwal Vyas
Th 22200

Abstract

Naushad Ali is regarded as one of the greatest music directors of Indian cinema. This research is to study & analyse the use of hindustani classical music in hindi film songs composed by Naushad. Naushad wanted to ensure that hindustani classical music

reached the masses. Through his talent, skill and mastery over the art of summering a raga into a song, he created masterpieces within three to four minutes. At the same time authenticity was not compromised as he used famous and established vocalists like Ustad Bade Ghulam Ali Khan, Ustad Amir Khan and Pandit D.V. Paluskar. Being a proponent of hindustani classical music, he incorporated various components of it like ragas, voice ornamentation techniques, taal and instruments and yet managed to keep his compositions simple, catchy, rhythmic and melodious which made him very popular as the audience could understand and relate to his work without having to know hindustani classical music in depth. Naushad was detail oriented and composed music keeping the subject, mood and situation of the scene in mind. Chorus and orchestra were used by him with such skill that it never overshadowed the lyrics of the song. He also added technical finesse and western trenches to the music and was one of the first to use folk music of Uttar Pradesh in his songs. Naushad was multitalented with knowledge of writing, poetry, storytelling, editing and recording. Richly textured classicism of his music was the product of these diverse influences. Translating hindustani classical music into popular music was his abiding contribution to hindi cinema. His creations are instantly recognizable to Indians across generations. His desire and journey to make classical music ubiquitous can be summed up in his own words, “Manzil Miley Ya Na Miley, Par Manzil Ki Justajoo Mein Mera Karwan To Hai”.

Contents

1. Biographical Sketch of Naushad Ali 2. Filmography 3. History of film music and music directors before Naushad Ali 4. An analysed study of some of Naushad's compositions based on classical music 5. Interviews. Conclusion. Photo gallery and bibliography.

456. थापर (तनवी)
हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत के प्रलेखन तथा संरक्षण में स्वर एवं ताल लिपि की भूमिका : एक समीक्षात्मक अध्ययन।
निर्देशिका : प्रो. अनुपम महाजन
Th 22201

सरांश

भारतीय शास्त्रीय संगीत मुख्यतः गुरु शिष्य परंपरा पर आधारित है, जिसमें शास्त्रीय संगीत की शिक्षा गुरु शिष्य पद्धति के रूप में मौखिक परंपरा द्वारा दी जाती है। इस पद्धति में गुरु द्वारा सीखे हुए संगीत को शिष्य आगे आने वाली पीढ़ी को पहुंचाते है, परंतु लंबे समय तक इस ज्ञान को सार्थक एवं शुद्ध रूप से बनाये रखना असंभव था इसी कारण संगीत का वास्तविक रूप भविष्य तक पहुँचते पहुँचते बदलता गया। समय के साथ साथ इसमें कई परिवर्तन आने लगे। अतः इसे लेखन पद्धति के माध्यम से संरक्षित रखना अधिक लाभप्रद प्रतीत हुआ। प्रस्तुत शोध प्रबंध में प्राचीन काल से आधुनिक काल तक स्वरलिपि एवंताललिपि के विकास क्रम में जो भी परिवर्तन और संशोधन हुए उसका विश्लेषण किया गया है और जिस प्रकार

समय के बदलते प्रारूप से जो लिपियाँ प्राप्त होती है,उनके आधार पर वर्तमान संगीतिक लिपियों को समझा जा सकता है। वर्तमान समय में नवीन कलाकारों द्वारा दी गई स्वरलिपि एवं काललिपि में दिए गए नवीन चिन्हों का विस्तृत रूप से वर्णन करते हुए संगीत के संरक्षण में लिपि पद्धतिओं की भूमिका का अध्ययन किया गया है। लिपि में संशोधन एवं इसका विकास क्रम संगीत के बहुमूल्य तत्वों को सुरक्षित एवं संरक्षित रखने के लिए इसकी आवश्यकता को दर्शाता है। लिपि की महत्वता को समझाते हुए विद्वानों एवं संगीतज्ञों ने अपने शोध के माध्यम से इसे शब्दों, वर्णों, अंकों, चिन्हों आदि से समझाया है। इस शोधकार्य में समयानुसार संगीत में आए परिवर्तनों को विभिन्न विद्वानों एवं चिंतकों ने स्वरलिपि पद्धति के माध्यम से किस प्रकार संरक्षित किया है, इस पर भी प्राथमिक स्रोतों के आधार पर चिंतन एवं विश्लेषण किया गया है।

विषय सूची

1. लिपि – अर्थ एवं महत्व 2. स्वरलिपि का विकास 3. ताल में लिपि का विकास 4. आधुनिक काल में लिपि 5. लिपि में नवीनीकरण की संभावनाएँ। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची ।

457. नामेश नन्दन
हिन्दुस्तानी संगीत में वॉयलिन वादन की शैलियों का विश्लेषणात्मक अध्ययन।
निर्देशक : प्रो. प्रतीक चौधुरी
Th 22635

सरांश

किसी भी कला का क्रियात्मक स्वरुप स्थित होने के पश्चात ही उसके सिद्धांत निश्चित होते हैं और भारतीय संगीत की ये मुख्य विशेषता रही है की इसमें मूलभूत तत्वो पालन के साथ कालांतर में अभिव्यक्ति की प्रक्रिया भी परिवर्तित होती रहती हैं। इन्हीं सिद्धांतों का अनुसरण करते हुए शास्त्रीय संगीत की प्रमाणिकता को सिद्ध करने में तंत्री वाद्यों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। वाद्यों के विकास क्रम में वायलिन को गज तंत्र वाद्यों की श्रेणी में रखा गया है। यद्यपि वायलिन पूर्ण रूप से पाश्चात्य देशों मुख्य रूप) से इटलीमें निर्मित वाद्य है तथा इसके उद्भव और (विकास के सम्बन्ध में पूर्ण विवरण भी पाश्चात्य संगीत के इतिहास में प्राप्त होता है जिसके आधार पर इसके परिष्कृत प्रारूपों का निर्माण सोलहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में कहा जा सकता है। फिर भी भारतीय मूलाधार मैं विभिन्न शोधों से प्राप्त तथ्यों के आधार पर इसका सम्बन्ध प्राचीन काल के भारतीय वाद्यों जैसे पिनाकी -,

रावणहत्था , सारंगी अदि से जोड़ा जा सकता है। यद्यपि वायलिन एक बिना परदे वाला वाद्य यन्त्र है फिर भी इसमें गायकी, तंत्रकारी और मिश्रित वादन शैलियों का प्रयोग सफलतापूर्वक किया जाता है। वादन की दृष्टि से देखा जाये तो इसकी गज हलकी होने के कारण तंत्रकारी के अनुरूप वादन करने में आसानी होती है साथ ही स्वर की निरंतरता बनी रहने के कारण गायकी अंग को भी सरलता से प्रस्तुत किया जा सकता है। इसी प्रकार मिश्रित शैली जो)वर्तमान में प्रचार में है का प्रदर्शन (भी सफलता पूर्वक किया जाता है। इस प्रकार वायलिन हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत के क्षेत्र में वादन की तीनों ही शैलियों की शैलीगत विशेषताओं को अपने मैं संजोये हुए महत्वपूर्ण एवं सारगर्भित रूप में पूर्णतया स्थापित है।

विषय सूची

1. भारतीय संगीत एवं वाद्य 2. वॉयलिन - एक परिचय 3. हिन्दुस्तानी संगीत में वॉयलिन वादन की विभिन्न शैलियाँ 4. हिन्दुस्तानी संगीत में वॉलियन के प्रमुख कलाकार एवं उनकी वादन शैली 5. साक्षात्कार। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची ।

458. पंत (हिमानी)
उत्तर भारतीय लोकधर्मी नाट्यविधाओं का सांगीतिक विश्लेषण (उत्तर प्रदेश के विशेष संदर्भ में)
निर्देशिका : प्रो. मधुबाला सक्सेना एवं डॉ. शैलेन्द्र कुमार गोस्वामी
Th 22198

सरांश

भरत मुनि ने नाट्यशास्त्र में लोकधर्मी व नाट्यधर्मी दो प्रकार की नाट्य परम्पराओं का उल्लेख किया है। लोकधर्मी नाट्य परम्पराओं में लोक का स्वभाविक अनुकरण होता है। लोकधर्मी नाट्य मनोरंजन का वह आडम्बरहीन साधन है जिसमें प्रयुक्त भाषा तथा वेशभूषा अत्यन्त सहज, सरल तथा स्वभाविक होती है। सामान्यतः लोकधर्मी नाट्यों में संगीत, अभिनय व नृत्य की प्रधानता रहती है। रासलीला हो या रामलीला, कीर्तनिया हो या भगत या फिर नौटंकी उत्तर प्रदेश के सभी लोकनाट्य विधाओं में मनोरंजनात्मक उद्देश्य से गीत, अभिनय, नृत्य तथा वाद्य प्रयोग बहुलता से दृष्टिगोचर होता है। लोकनाट्य के पारम्परिक स्वरूप के संरक्षण के प्रति समाज की आस्था और वर्तमान समय में लोकनाट्यों के सौन्दर्यात्मक एवं सांगीतिक पक्षों के परिवर्तित स्वरूपों को ध्यान में रखते हुए इस विषय का विस्तृत विश्लेषण करके प्रस्तुत शोध प्रबन्ध को चार आध्यायों में विभाजित किया गया है। प्रथम अध्याय में लोक शब्द की व्याख्या, लोकनाट्य से तात्पर्य, लोकनाट्य की लोकधर्मी एवं नाट्यधर्मी वृत्तियां, लोकनाट्य की ऐतिहासिक पृष्टभूमि, रचना विधान, प्रस्तुतिकरण, सामाजिक तथा

सांस्कृतिक पक्ष को प्रकाशित किया गया है। दि्वतीय अध्याय में उत्तर प्रदेश के विशिष्ट लोकधर्मी नाट्यों स्वांग, भगत, नौटंकी, रामलीला, रासलीला आदि के परम्परागत स्वरूप की व्याख्या की गयी है। तृतीय अध्याय में वर्तमान परिप्रेक्ष में लोकनाट्य में आये परिवर्तन तथा इन परिवर्तनों से लोकनाट्यों के संरक्षण पर क्या प्रभाव पड़ेगा इनका अन्वेषण व विवेचन किया गया है। चतुर्थ अध्याय सांगीतिक विश्लेषण से सम्बद्ध है जिसमें शास्त्रीयसंगीतात्मक तत्वों एवं लोकसंगीतात्मक तत्वों की दृष्टी से लोकनाट्य में प्रयुक्त संगीत से सम्बन्धित सामग्री का सांगीतिक विश्लेषण किया गया है। उपसंहार के रूप में लोकधर्मी नाट्यविधाओं को समग्रता प्रदान करते हुए उत्तर प्रदेश में प्रचलित लोकनाट्यों के सांगीतिक विश्लेषण से सम्बन्धित विशिष्ट निष्कर्षों और इन लोकनाट्यों की सांगीतिक उपयोगिता को सिद्ध करने का प्रयास किया गया है।

विषय सूची

1. लोक एवं लोकधर्मी नाट्य विधा का सम्बन्ध 2. उत्तर प्रदेश के विशिष्ट लोकधर्मी नाटकों का परम्परागत स्वरूप 3. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में लोकधर्मी नाट्य विधाओं का परिवर्तित स्वरूप 4. लोकनाट्यों का सांगीतिक विश्लेषण। उपसंहार। चित्रावली। संदर्भ ग्रंथ सूची ।

459. भटनागर (सुकृति)
वर्तमान परिप्रेक्ष्य में सामवेद की ऋचाओं का सांगीतिक पक्ष।
निर्देशक : डॉ. राजीव वर्मा
Th 22630

विषय सूची

1. सामवेद का परिचय 2. सामवेद का शास्त्रात्मक पक्ष 3. सामवेद का स्वर पक्ष 4. सामगाान की गायन प्रणाली 5. वत्रमान परिप्रेक्ष्य में सामगान। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

460. भारत भूषण
पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर एवं संस्थागत संगीत शिक्षण परम्परा : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन।
निर्देशिका : प्रो. सुनीरा कासलीवाल व्यास
Th 22636

सरांश

18वीं शताब्दी का अन्त तथा बीसवीं शताब्दी का प्रारम्भ भारतीय संगीत के पुनरुत्थान का काल माना जाता है। इस समय संगीत के पुनरुत्थान की दृष्टि से घरानों की अन्तिम कड़ी के रूप में पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर एवं पंडित भातखंडे यह दो

ऐसे महान संगीतज्ञ हुए जिन्होंने संगीत के पुनरूद्धार के लिए अथक परिश्रम किए और संगीत के आध्यात्मिक धरातल को सुदृढ़ रखते हुए उसको सर्वजन सुलभ बनाने में महत्वपूर्ण योदान दिया। इस दृष्टि से सन् 1901 में पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर द्वारा लाहौर में की स्थापना संगीत शिक्ष "गांधर्व महाविद्यालय"ा के क्षेत्र में एक क्रान्तिकारी परीक्षण था जिसमें प्राचीन गुरुकुल प्रणाली तथा आधुनिक संस्थागत शिक्षण प्रणाली का अद्भुत समन्वय था। इसका उद्देश्य केवल मात्र संगीतकारों को संगीत क्षेत्र में कार्य प्रवृत्त करना, संगीतकारों से संगीत शिक्षण कार्य में लाभ उठाना, तथा संगीतकारों के लिए समाज में प्रतिष्ठा स्थापित करना और इन सभी कार्यों से संगीत को अन्य कलाओं तथा विधाओं के समान स्तर पर सामाजिक रूप से ग्राह्य बनाना था। पंडित जी के इन्हीं आदर्शों को मार्गदर्शक बना कर उनके शिष्योंप्रशिष्यों - ने भी इसी ध्येय से कार्य करते हुए एक के बाद एक विद्यालयों की स्थापना की। जिसके फलस्वरूप संगीत के संस्थागत शिक्षण का प्रचलन बढ़ा तथ धीरेधीरे वह - सम्पूर्ण देश में व्याप्त हो गया। इस शिक्षण पद्धति के लोकप्रिय होने का मुख्य कारण इसकी सर्वजन सुलभता ही है। संगीत के संस्थागत शिक्षण के प्रचार में आने के समय से आज तक असंख्य विद्यार्थियों ने अपनीअपनी- रूचि एवं क्षमता के अनुसार संगीत शिक्षा प्राप्त कर इस विषय के प्रति समाज में एक जागरूकता एवं आदर उत्पन्न किया। वर्तमान में संगीत से सम्बन्धित विभिन्न क्षेत्रों जैसेशिक्षण -, प्रदर्शन, लेखन, समालोचन, प्रशासन आदि सभी में संगीत संस्थाओं से शिक्षण प्राप्त कर अधिकांश विद्यार्थी ही उत्तरदायित्वों का सफलतापूर्वक वहन कर रहे हैं।

विषय सूची

1. स्व. गायनाचार्य पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर 2. पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर द्वारा व्यवस्थित संस्थागत शिक्षण पद्धति एवं गांधर्व महाविद्यालय की स्थापना 3. पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर के शिष्यों द्वारा स्थापित अखिल भारतीय गांधर्व महाविद्यालय मंडल की स्थापना 4. पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर के शिष्य एवं प्रशिष्यों द्वारा स्थापित संगीत संस्थाएँ एवं उनकी वर्तमान स्थिति 5. संस्थओं के प्रमुख संस्थापकों, प्रमुख अध्यक्षों एवं विषय सम्बंधित व्यक्तियों से साक्षात्कार। उपसंहार। परिशिष्ट। संदर्भ ग्रंथ सूची ।

461. BOONSRIANAN (Pitsanu)
Comparative Study of Indian Pakhawaj and Thai Sawng-na
Supervisors : Prof. Najma Perveen Ahmad and Prof. Alka Nagpal
Th 22205

Contents

1. Introduction and history of Indian and Thai music 2. Structure and musical components of sawng-na 3. Pakhawaj its origin and development 4. Comparative

study of Thai Drum Sawng-na and Indian Drum Pakhawaj. Conclusion, list of figures and Bibliography.

462. मुखोपाध्याय (अरिन्दम)
पण्डित विनय चन्द्र मौद्‌गल्य : व्यक्तित्व एवं कृतित्व।
निर्देशक : प्रो. ओजेश प्रताप सिंह
Th 22631

विषय सूची

1. जीवन परिचय 2. पण्डित विनय चन्द्र जी का व्यक्तित्व 3. सांगीतिक जीवन एवं संगीत के क्षेत्र में योगदान 4. विशिष्ट व्यक्तियों से साक्षात्कार 5. पण्डित विनय चन्द्र मौद्‌गल्य की कुछ रचनाएँ। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची। परिशिष्ट।

463. LUTHRA (Jagriti)
Contribution of Ustad Nusrat Fateh Ali Khan to Sufi Music.
Supervisors : Prof. Madhu Bala Saxena and Dr. Ojesh Pratap Singh
Th 22211

Abstract

Music has always been a medium adopted by the people to present the poetry in different religions. The study covers the Origin, Scope and Development of Sufism in India. Sufi Music with its modern trends like Indipop, Fusion and Cinema has been studied in detail. The singular contribution of Ustad Fateh Ali Khan has been deeply highlighted. Though coming from a family that had nurtured the art of Sufi Qawwali singing for over six centuries Khan Saheb had became as the leader of the Party named as 'NUSRAT FATEH ALI KHAN MUJAHID MUBARAK ALI KHAN'S AND PARTY'. Ustad ji was an artiste of great stature, unmatched and unparrallel calibre. Born on 13th October 1948, Pakistan, he re-introduced the classical dimentions into Qawwali. Though khan sahib's popularity was known as the best Qawwali and Gazals singers of his time, he was also noticed as a genius composer and play back singer. That is why he was able to create many albums, documentries and concert films of great marrit in collaborations with artistes from western countries.These appreciations and acknowledgements showered many awards on him. He excelled in whatever he chose to sing, may it be a pure Classical Raga, Hori, Hamd, Banara, Vidhai or a Naat. Some of his rare compositions have been transcribed into the Indian notation system (Sargam). To have a comparitive view, an analysis of Khan Saheb's gayaki with the other Sufi and Qawwali singers has been presented in detail. Tributes and interviews of renowned artistes have made this study more impressive about Khan Saheb. On 16th Aug 1997, Khan Saheb passed away in London due to liver and kidney failure. His lagecy was further carried by his nephew Ustad Rahat Fateh Ali Khan.The phenomenal acheivements of Ustad Nusrat Fateh Ali Khan were therefore having no exceptions.

Contents

1. Historical analysis of Sufism 2. Sufi music and its styles 3. Life sketch of Ustad nusrat Fateh Ali Khan 4. Ustad nusrat Fateh Ali Khan- The man and his music 5. Nusrat vs. other Sufi and Qawwali singers : A comparative study. Conclusion, Pictography, Glossary, Musical vocabulary, Bibliography and Musical audio and video CDs index.

464. विजेता

विद्युतीय वाद्यों का शास्त्रीय संगीत के अभ्यास एवं मंचप्रदर्शन में स्थान : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन।

निर्देशक : डॉ. राजीव वर्मा

Th 22637

Abstract

Summary of Dissertation (by Vijeta) submitted under the supervision of Dr. Rajeev Verma, Associate professor Department of Music, University of Delhi, Music is an art in which musician expresses his imaginations and his creative thoughts and when this music is compiled with swar and taal elements becomes classical music. Every musical art requires swar, further swar needs laya and laya requires taal and one is not complete without other. Necessity is the mother of invention, and every invention has its elemental culture, and keeping this culture as base these electronics musical instruments like Table, Tanpura, Swarmandal, Swar Peti etc. are present before us. Which become useful to every student, teacher and artist. if we keep view of stage performance these electrical musical instruments are the base of aadhar swar and help in creating supporting environment but still a simple Tanpura is kept there. Because they cannot produce supporting nada that gives us inspiration to enter in the soul of raga. and it doesn't look good if we give performance/presentation with electronic rhythm instruments. The reason behind it is that our music is expression based and rhythm based that changes expression every moment. tanpura is he only instrument which can be used to produce base swar and is used to produce notes and is used as supporting instrument. There fore an assistant musician is always required in stage performance. Of course artificial/manual electronic instruments cannot comply with the traditional instruments and even cannot substitute them completely. All the chapters in the presentation of these thesis and considering all factors, the summary of this dissertation that is "Vidyutiya Vadyon Ka Shastriya Sangeet Ke Abhyas Evam Manchpradarshan Mein Sthan- A Detailed Study" has been presented. The index, bibliography has been collected on the basis of all the reference books, magazines and web sites.

विषय सूची

1. संगीत 2. विद्युतीय वाद्यों का उद्‌भव, उत्पत्ति एवं विकास 3.संगीत कला एवं अभ्यास का अर्न्तसम्बन्ध 4. मंचप्रदर्शन की दृष्टि से विद्युतीय वाद्यों की सार्थकता। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची ।

465. श्रीवास्तव (प्रीति)

बीसवीं शताब्दी के मुख्य सितार कलाकारों की वादन शैली तथा परम्परा का विश्लेषणात्मक अध्ययन।

निर्देशिका : प्रो. अनुपम महाजन

Th 22197

सरांश

बींसदी षताब्दी सितार का चर्मोत्कर्श का समय रहा । इसमें सितार में प्रत्येक प्रकार का विकास हुआ सितार के ढाचे में अमूलचूक परिवर्तन हुए साथ ही वादन सामग्री मे भी बहुत से विकासषील परिवर्तन हुए इन परिवर्तनों नें स्वतः ही स्थान नहीं लिया बलकि 20 वीं षताब्दी के महान वादकों ने अपना पूरा जीवन लगा दिया । बींसवी षताब्दी का सितार इन महान वादकों की विभिन्न विषेशताओं से पूर्ण था । सभी वादकों नें अथक प्रयास से अपने घरानें की खूबियों को विषेश स्थान प्रदान कराया परिणाम स्वरूप सारे घरानों ख्याति प्राप्त हुयी । 20 वीं षतब्दी के मुख्य कलाकारों के रूप में उुस्ताद मुष्ताकर अली खॉ जो कि सैनिया घरानें के थे तथा परम्परागत वादन षैली का वादन करते थे , पंडित रवी षंकर जिन्हे लोग सितारे नाम का पर्याय ही समझनें लगे थे देषविदेष सभी स्थानों पर सितार को ख्याती दिलाने में इनका विषेश - योगदान रहा , उú हलीम जाफर खॉ जिनका सितार मीड़ प्रधान होता था , उú विलाय खॉ इटावा घराना जिनका सितार सदैव गाता हुआ प्रतीत हुआ तथा ख्याल गायकी का विषेश प्रयोग किया , पंú बलराम पाठक जिन्हों नें ध्रुवपद आधारित वादन किया इनकी बंदिषे भी धुवपद से प्रभावित रहती थी तथा पंड़ित निखिल बैनर्जी जो कि स्वरों के एसे जादूगर थे कि उनके समय काल के कलाकार तो उनके वादन से मंत्रमुग्ध थे ही साथ ही वर्तमान समय तक भी सभी चाहे वे छोटा हो अथवा बडा श्रोता हो उनके वादन का दिवांना हैं आदि कलाकारों का समावेष किया गया है । इन सभी कलाकारों द्वारा किया गऐ वादन षैली के साथ ही ढाचेगत परिवर्तर्नो पर प्रकाष डालनें का हर सम्भव प्रयत्न षेध मे किया गया है । कलाकारों के योगदान को दर्षानें हेतु विभिन्न बिन्दुओं का समावेष किया गया है ।

विषय सूची

1. सितार की उत्पत्ति एवं विकास 2. उस्ताद मुश्ताक अली खाँ 3.पंडित रवीशंकर 4. उस्ताद हलीम जाफ़र खाँ 5. पंडित बलराम पाठक 6. उस्ताद विलायत खाँ 7. पंडित निखिल बैनर्जी 8. बीसवीं शताब्दी के मुख्य सितार वादकों की वादन शैली का विश्लेषण। उपसंहार। सी डी अनुक्रमणिका एवं संदर्भ ग्रंथ सूची ।

466. शर्मा (निष्ठा)

अष्टछाप काव्य में सांगीतिक शैलिया, लय योजना एवं छंद विधान।

निर्देशिका : प्रो. गीता पैंतल

Th 22632

सरांश

मध्यकाल के सांस्कृतिक धर्म संकट एवं भारतीय धर्मों के आंतरिक मतभेदों के बीच देश, धर्म एवं संस्कृति के बचाव हेतु आंतरिक रूप से चल रहे आंदोलनों ने आशातीत लोकप्रियता अर्जित की। इस कार्य की सिद्धि हेतु निर्गुणसगुण सभी संतों एवं भक्तों - ने पूर्ण योगदान दिया। इन्हीं आंदोलनों के मध्य बल्लभमतीय अष्टयाम सेवा विधि श्रीकृष्ण भक्तों द्वारा व्यापकरूप में अंगीकृत की गयी। इस सम्प्रदाय एवं सेवा पद्धति को जनजन तक पहुँचाने के लिए स्वयं महाप्रभु श्री बल्लभाचार्य जी ने एवं - उनके योग्य उत्तराधिकारी एवं पुत्र गोसाईं श्री विट्ठलनाथ जी ने काव्य और संगीत को प्रचार का माध्यम बनाया तथा श्रेष्ठ कवियों एवं संगीतकार गायकों की खोज की तथा आराध्य देव सेवा की अभिवृद्धि हेतु आठ भक्तों को पुष्टिमार्ग -की राग 'श्रीनाथ जी' के प्रमुख साधकों व कीर्तनकारों के रूप में चुना। यह आठों कवि;श्री कुंभनदास, श्री सूरदास, श्री परमानंददास, श्री कृष्णदास, श्री गोविन्दस्वामी, श्री छीतस्वामी, श्री चतुर्भुजदास एवं श्री नंददास अष्टछाप कवि एवं के नाम से 'अष्टसखा' के 'श्रीनाथ जी' रागिनियों को भक्ति का माध्यम बनाकर -सुविख्यात हुए। इन अष्टसखाओं ने राग दूसरे का पूरक बना दिया-भक्ति एवं संगीत को एक, जिसके परिणामस्वरूप मंदिरों के प्रांगण से सुवासित होती हुई रागरागिनी की स्वर लहरी भारतीय परिवारों के प्रांगण - के प्रति पूर्णतया समर्पित थे। 'श्रीनाथ जी' तक गूँज उठी। अष्टछाप कवि अपने ईष्ट साथ ही साहित्य एवं संगीत कला में निष्णात थे। अष्टछाप कवियों को भक्त संगीतज्ञों की संज्ञा दी जाती है क्योंकि उन्होंने श्रीठाकुर जी की लीलाओं को न केवल अपने काव्य में उतारा वरन् नित्प्रतिदिन अष्टयाम सेवा में स्वयं उनका गान भी - रागिनियों एवं तालों के नाम-किया। उनके काव्य में वर्णित राग, श्रुति, स्वर, ग्राम, मूच्र्छना, आलाप, तान इत्यादि तत्वों का वर्णन एवं धुरपद, धमार, रागमाला आदि सांगीतिक शैलियों में लय व छंदों के अनुकूल निबद्ध उनकी पद्यावलियाँ उनके उत्कृष्ट संगीत ज्ञान की परिचायक हैं।

विषय सूची

1. कृष्ण भक्ति काव्य परम्परा एवं अष्टछाप 2. अष्टछाप काव्य में सांगीतिक विश्लेषण 3. अष्टछाप काव्य में प्रयुक्त सांगीतिक शैलियाँ 4. अष्टछाप काव्य में वर्णित राग एवं ताल 5. अष्टछाप काव्य में लय योजना एवं छंद विधान। उपसंहार। परिशिष्ट। संदर्भ ग्रंथ सूची ।

467. शर्मा (नेहा)
आधुनिक युग में स्वरलिपि पद्धति के बदलते स्वरूप : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन।
निर्देशिका : प्रो. सुनीरा कासलीवाल व्यास
Th 22209

सरांश

स्वरलिपि द्वारा परंपरागत तथा वर्तमान संगीत को आने वाले समाज के लिए सुरक्षित किया जा सकता है साथ ही स्वरलिपि की आवश्यकता संगीत को अन्य विषयों की भाँति प्रतिष्ठित और सामाजिक स्तर दिलवाने में है | प्राचीन सांगीतिक ग्रन्थों पर दृष्टिपात के आधार पर स्वरलिपि पद्धति का क्या स्वरूप रहा होगा इसका केवल अनुमान लगाया जा सकता है | 20 वीं शताब्दी में भारतीय संगीत की दो महान विभूतियों द्वारा "पं॰ विष्णु नारायण भातखण्डे" और "पं॰ विष्णु दिगम्बर पलुस्कर" स्वरलिपि पद्धतियों का निर्माण किया गया। पलुस्कर जी ने स्वरलिपि पद्धति को ग्राफ की तरह प्रस्तुत किया है। बोलचाल की भाषा में कहें तो स्वरलिपि में 'रनिंग हैंड' लिखी प्रतीत होती है, वहीं दूसरी ओर भातखण्डे जी की स्वरलिपि एक तालिका के रूप में दिखाई देती है। बन्दिशों या गत की यह रूपरेखा छोटी तथा साफ प्रतीत होती है। पं॰ विष्णु नारायण भातखण्डे जी के साथ - साथ अन्य अनेक विद्वानों जैसे- अनन्त मनोहर जोशी, फिरोज फ्रामजी, गुरुजी गणेश भास्कर भिड़े, महाराणाशंकर अंबाशंकर शर्मा, गोविन्दराव टेम्बे आदि अनेक विद्वानों ने इस तालिका जैसे प्रतिरूप में स्वरलिपि को प्रदर्शित करना उचित समझा। यद्यपि इन विद्वानों के स्वरों के स्वरूप ताल आदि के चिन्ह पृथक थे। वाद्य संगीत के क्षेत्र में स्वरलिपि के जो प्रयोग हुए वह पलुस्कर परंपरा या भातखण्डे स्वरलिपि का ही अनुसरण करते प्रतीत होते है। वर्तमान काल में भारतीय संगीत की पहुँच विश्व के हर कोने में है। स्वरलिपि संबन्धित आवश्यकताओं तथा सार्वभौमिकता को ध्यान में रखते हुए चिन्हों को यथोचित तरीके से प्रयुक्त करें तो आधुनिक काल की मांग की पूर्ति की दिशा में यह एक सार्थक प्रयास होगा और इस प्रयास के प्रति लोगों को जागरूक करना तथा उसे प्रचार में लाना संगीत समाज का कर्तव्य है।

विषय सूची

1. भारत में स्वरलिपि पद्धति का ऐतिहासिक विकास 2. उन्नीसवीं शताब्दी से बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध तक स्वरलिपि पद्धति का स्वरूप एवं विकास 3. पं. विष्णु दिगम्बर पलुसकर एवं पं. विष्णु नारायण भारतखण्डे द्वारा निर्मित स्वरलिपि पद्धतियों का स्वरूप विकास एवं प्रयोक्ता 4. वाद्य संगीत में स्वरलिपि पद्धति का स्वरूप एवं विकास 5. स्वरलिपि पद्धति के नवीन प्रयोग एवं विदेशी शोधकर्ताओं द्वारा प्रस्तावित स्वरलिपि पद्धति। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची ।

468. शर्मा (रोहित कुमार)
प्राचीन काल से आधुनिक काल तक की राग वर्गीकरण पद्धतियों का समालोचनात्मक अध्ययन।
निर्देशिका : प्रो. अनुपम महाजन
Th 22212

सरांश

प्राचीनकाल से लेकर आधुनिक काल तक रागों के बदलते स्वरुप और स्वरों के नामो में, परिवर्तन होने से तत्कालीन समय में प्रचलित राग वर्गीकरण की पद्धतियां भी बदलती रही हैं| प्रत्येक काल में एक राग वर्गीकरण के होते हुए दूसरी राग वर्गीकरणों पद्धतियों का प्रादुर्भाव होना यह दर्शाता है कि तत्कालीन समय में भले ही एक राग वर्गीकरण पद्धति पूर्ण मानी जाती रही हो किन्तु समय के साथ संगीत कला में आए परिवर्तनों के आधार पर प्रासंगिक वर्गीकरण पूर्ण नहीं दिखता| जिसके फलस्वरूप एक नए राग वर्गीकरण को जन्म देना संगीताचार्यो व विद्धानों की परम्परा रही हैं| प्रस्तुत शोध प्रबंध में सर्वप्रथम भारतीय संगीत का आधार 'राग' शब्द की व्याख्या की गयी है| भरत ने जाति के अन्तर्गत शुद्ध एवम विकृत जातियों के रूप में जाति वर्गीकरण किया है| वही मतंग ने ग्राम राग और देशी राग के अन्तर्गत रागों को विभिन्न गीतियों में वर्गीकृत किया है| पंडित शारंगदेव ने रागों के दशविध भेद बताये है| नारद ने भी रागों को वर्गीकृत करने के लिए अनेक मत दिये है जिनका वर्णन हमने अपने शोध में किया है| मध्यकालीन ग्रंथकारों ने रागरागिनी वर्गीकरण तथा मेल राग वर्गीकरण - पद्धति को मान्यता दी है| आधुनिक काल में राग वर्गीकरण की तीन प्रमुख पद्धतियां थाठ राग वर्गीकरण, कालानुसार राग वर्गीकरण एवम रागांग राग वर्गीकरण का वर्णन हमने अपने शोध प्रबंध में किया हैं| अपने विषय से सम्बंधित तथ्यों का ऐतिहासिक वर्णन करते हुए, प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक की राग वर्गीकरण पद्धतियों के गुणदोषो का गहनतापूर्वक अध्ययन कर आलोचनात्मक - पद्धति के द्वारा वर्णन किया गया है| उपर्युक्त सभी राग वर्गीकरण पद्धतियो का

अध्ययन करने के पश्चात् यह कहा जा सकता है कि एक वर्गीकरण पद्धति राग वर्गीकरण के लिए पर्याप्त नहीं है| राग वर्गीकरण के लिए राग के स्वर साम्य तथा 'स्वरुप साम्य' दोनों में समन्वय जरूरी है|

विषय सूची

1. ऐतिहासिक पृष्ठभूमि 2. प्राचीन काल में वर्णित राग वर्गीकरण 3. मध्यकला में वर्णित राग वर्गीकरण 4. आधुनिक काल में वर्णित राग वर्गीकरण 5. प्राचीन काल से आधुनिक काल तक की राग वर्गीकरण पद्धतियों की समालोचना। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची ।

469. शर्मा (सीनू)
स्वतन्त्रता पश्चात् भारत में हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत की लोकप्रियता हेतु किए गए प्रयासों का परिवर्तित स्वरूप।
निर्देशिका : डॉ सुदीप्ता शर्मा
Th 22627

सरांश

भारतीय संगीत के विकासक्रम पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि कला एवं संगीत सदैव से ही परिवर्तनशील विषय रहा है। देश, काल व परिस्थितियों में परिवर्तन आने से इसी मिश्रण के परिणामस्वरूप हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत के क्रियात्मक व शास्त्रीय दोनों पक्षों में भी विभिन्न परिवर्तन देखने को मिलते हैं। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध स्वतंत्रता पश्चात् भारत में हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत की लोकप्रियता हेतु किए गए प्रयासों पर केन्द्रित किया गया है। इसमें इन परिवर्तनों के कारण एवं भविष्य पर विश्लेषणात्मक ढंग से चर्चा की गई है। 19वीं शताब्दी में संगीत शिक्षण की संस्थागत पद्धति का जन्म हुआ। जिसका श्रेय पंडित भातखण्डे एवं पंडित पलुस्कर जी को जाता है। इन्होंने शैक्षिक संस्थाओं में संगीत को विषय के रूप में स्थान दिलाया और संगीत विद्यालयों की भी स्थापना की जिनमें घरानेदार संगीत शिक्षण पद्धति के मूल रूप को कायम रखने की दृष्टि से घरानेदार कलाकारों को शिक्षक के रूप में नियुक्त किया। संगीत की परंपरा को जीवित रखने में घरानों के योगदान एवम् परिवर्तित स्वरूप की प्राथमिक स्रोतों के आधार पर विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है। स्वतंत्रता उपरान्त संस्थागत शिक्षण के लिए विद्यालयों, महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में संगीत की विधिवत शिक्षा प्रारम्भ हुई। स्पीक मैके, आई.सी.टी., संगीत नाटक अकादमी इत्यादि एवं निजी संस्थाओं ने संगीत को प्रदर्शन कला के रूप उभारने हेतु कार्यशालाओं, संगोष्ठियों तथा सगीत कार्यक्रमों का आयोजन किया। स्वतंत्रता उपरान्त भारतीय शास्त्रीय संगीत की लोकप्रियता का श्रेय मुख्य रूप से प्रिंट

मीडियापुस्तकें -, समाचारपत्र आदि मुद्रित सामग्री तथा इलेक्ट्रॉनिक मीडियारेडियो -, दूरदर्शन, कम्प्यूटर, इंटरनेट, मोबाइल, सीडी, पैन ड्राइव, वीडियो कान्फेंसिंग, आनलाइन शिक्षण तकनीक इत्यादि वैज्ञानिक उपकरणों को जाता है। इसी अध्ययन का गुण दोषों सहित प्राथमिक स्रोतों से सामग्री एकत्र कर विश्लेषण किया गया है। प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध का निष्कर्ष इन्हीं बिंदुओं के आधार पर विश्लेषण करके किया गया है।

विषय सूची

1. भारत में शास्त्रीय संगीत की पूर्व-पीठिका 2. घरानेदार संगीत शिक्षण प्रणाली द्वारा शास्त्रीय संगीत की लोकप्रियता 3. शास्त्रीय संगीत के विभिन्न संगठन : शिक्षण एवं प्रस्ततिकरण 4. संगीत सम्मेलन एवं उनका योगदान 5. शास्त्रीय संगीत के प्रसारार्थ दृश्य-श्रव्य माध्यमों की भूमिका। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

470. SEHGAL (Jyotika)
Enquiry into Lingual to Visual Translation Process as a form of Trans-Disciplinary and Trans-Cultural Mediation.
Supervisor : Prof. M. Vijayamohan
Th 22199

Contents

1. Introduction 2. What is translation? 3. Extending 'lingual-to-lingual' onto 'lingual-to-visual' 4. What is 'visual translation'? 5. 'Inspired art' and 'visual translation' 6. Practical visual renditions : Translating Ghalib's ghazals into paintings 7. conclusion. Bibliography, webliography and appendix.

471. सिमरप्रीत कौर
पंजाबी लोक संगीत का हिन्दी चित्रपट संगीत में प्रयोग : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन।
निर्देशिका : प्रो. उमा गर्ग
Th 22638

सरांश

भारत में हिंदी चित्रपट संगीत सर्वाधिक लोकप्रिय संगीत शैली है और मनोरंजन का एक प्रमुख माध्यम है। चलचित्र संगीत के स्वरूप का अध्ययन सांगीतिक दृष्टि से अत्यधिक महत्व रखता है। आधुनिक हिंदी चित्रपट संगीत का एक बड़ा भाग 'पंजाबी लोक संगीत' से प्रभावित है। अतः 'पंजाबी लोक संगीत का हिंदी चित्रपट संगीत में प्रयोग' एक विश्लेषण का विषय है। पंजाबी लोक संगीत का क्षेत्र बहुत विशाल है। जिसके अंतर्गत अनेक गायन शैलियां जैसे जुगनी, छल्ला आदि तथा नृत्य जैसे भांगड़ा, गिद्दा आदि और कई वाद्यों जैसे ढोल, ढोलक आदि की पंजाबी वादन शैली समस्त

विश्व में बहुत प्रचलित है और इसका वर्णन प्रथम अध्याय में है। दूसरे अध्याय में हिंदी चित्रपट संगीत के इतिहास का विश्लेषन है और 1941 से लेकर वर्तमान तक पंजाबी लोक संगीत के प्रयोग पर प्रकाश डाला गया है। तृतीय अध्याय में हिंदी चित्रपट संगीत में पंजाबी लोक संगीत के बहुल प्रयोग के कारण का विवरण है। जिसमें लोकप्रियता को एक प्रमुख कारण के रूप में देखा जा सकता है। चतुर्थ अध्याय में हिंदी चलचित्र के कुछ लोकप्रिय गीतों में पंजाबी लोकसंगीत के तत्वों का निरीक्षण है। इस अध्याय में कुछ गायन शैलियों का चलचित्र गीतों के साथ स्वर लिपि के माध्यम से तुलनात्मक अध्ययन प्रतिपादित है। पंचम अध्याय हिंदी चलचित्र संगीत एवं पंजाबी लोकसंगीत दोनों गायन शैली पर सांगीतिक आर्थिक एवं सामाजिक दृष्टि से प्रभावों का साक्षात्कार के माध्यम से आंकलन प्रस्तुत करता है। निष्कर्षतः इस विस्तृत अध्ययन से यह स्पष्ट है कि पंजाबी लोक संगीत का प्रयोग हिंदी चित्रपट संगीत में लोकप्रियता एवं आर्थिक दृष्टि से उद्देश्यपूर्ण रहा है एवं अति विशिष्ट भूमिका निभाता आया है। अतः भविष्य में भी पंजाबी लोक संगीत का प्रयोग हिंदी चित्रपट संगीत को लाभान्वित करता रहेगा।

विषय सूची

1. पंजाब का लोक संगीत 2. हिन्दी चित्रपट संगीत 3. हिन्दी चित्रपट में पंजाबी लोक-संगीत के कारण 4. पंजाबी लोक संगीत से प्रभावित कुछ प्रचलित हिन्दी चित्रपटीय गीतों की स्वरलिपियाँ 5. प्रभाव एवं योगदान : साक्षात्कार के माध्यम से अध्ययन। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची। परिशिष्ट।

472. Singh (Tajinder Pal)
Contribution of PT. A.T. Kanan to Hindustani Music
Supervisor : Dr. Rajiv Verma
Th 22207

Abstract

In Indian Classical Music, the renowned musicians who had mastery on this particular type of music are categorized as "maestro", "pandit" or "ustad". When such terms are used to refer to a musician, it clearly defines his contribution towards the art. Pt.A.T Kanan was one of the legendary figures in the field of Hindustani classical music of the 20th century. Although he was a versatile figure, I did not find any written literature about him which could have helped me to know him better. I have gone through the different libraries of various colleges and universities but again i wasn't able to get any valid source or reference on Pandit A.T Kanan. Here, I believe, it is important to highlight that writing this thesis on A.T Kanan proved to be a big challenge, given that there are not many sources of information on him. There is no written literature nor many recordings of him are available nowadys. This thesis has been written from the knowledge and information which i was able to acquire from Pandit Kanan's family members, his discilpes, his colleagues and near and dear ones when i travelled and interviewed them at Delhi, ITC-SRA Kolkata, Chennai, Hyderabad for my research. I hope that this humble attempt of mine does justice to his

enormous contribution to the field of Hindustani Classical Music. My expectations are that this first and genuine attempt on Pandit A.T Kanan would not ony bring all about his life and contributions to the art, but it will also help students of Indian Classical Music and anyone interested in this topic as a reference to further work on the same subject through other different aspects.

Contents

1. Pandit A. T. Kanan : Early days and background 2. The beginining of the musical career 3. Pandit A. T. Kanan as a Mature Musician : Analysis of his gayaki 4. Pandit A. T. Kanan: as a Distinguished guru 5. Pandit A. T. Kanan's concept of rendering khyal 6. vidushi Malabika Kanan : Pandit Kanan's lifelong musical companion. Conclusion. annexure and bibliography.

473. सिंह (रविशंकर)
सितार वाद्य में नवीन प्रयोग, ध्वनि की गुणवत्ता के विशेष संदर्भ में।
निर्देशिका : प्रो. अलका नागपाल
Th 22202

सरांश

सम्पूर्ण ब्रहमांड नादमय एवम गतिमय हैं| भारतीय संगीत के आधार स्तम्भ स्वर तथा ताल इसी नाद एवम गति के परिष्कृत रूप हैं| भारतीय संगीत में सारिकायुक्त तंत्री वाद्यो में सितार का स्थान आज के युग में शीर्षस्थ है| सितार का आधुनिक स्वरुप पिछले दो शताव्दियों में हुए विशेष विकास का परिणाम है| प्रत्येक वाद्य की अपनी ध्वनि गुणवत्ता होती है| यह ध्वनि गुणवत्ता उस वाद्य की बनावट, वाद्य को बजाने में प्रयुक्त सामग्री पर आधारित होती है| इसी के आधार पर हर वाद्य की एक अगल पहचान बनती है| प्रयोगधर्मी कलाकारों एवम कुशल वाद्य निर्माताओ के बीच गहन चिंतनविमर्श के फलस्वरूप वर्तमान समय में सितार वाद्य -मनन एवम आपसी विचार- के स्वरूप में बहुत कुछ परिवर्तन देखने को मिलता है| सितार की लम्बाई व चौड़ाई में अपेक्षाकृत कमी यानि सितार का आकार पहले के अनुपात में छोटा हुआ है| सितार पर मींड़ का काम अधिक करने की प्रवृति की ओर झुकाव बढ़ा है तथा भारी तबली का प्रयोग होने लगा है| बहुमुखी प्रतिभावान सितार वादक अन्य बातो के साथसाथ सितार - में प्रयुक्त तार के प्रति भी जागरूक रहे हैं| जिससे की सितार की ध्वनि गुणवत्ता को अधिक से अधिक विकसित एवम मधुर बनाया जा सके| अधिक संवेदनशील पिकअप - माइक एवम माइक्रोफोन के होने के कारण दूसरे तुम्बे के प्रयोग की आवश्यकता नहीं रही| लौकी से निर्मित तुम्बे के स्थान पर फाइबर ग्लास से निर्मित तुम्बे का इस्तेमाल करते हुए भी कुछ नए सितार देखने में आ रहे हैं| सितार में ध्वनि गुणवत्ता को बढ़ाने के लिए कुशल वाद्य निर्माताओ ने अपनी बुद्धि एवम चिंतनशील प्रवृति के कारण

नित्यप्रति नए नए प्रयोग कर सितार वाद्य को-एक नई पहचान दिलाई है| प्रस्तुत शोध कार्य के आधार पर यह कहा जा सकता है कि परम्परागत वाद्य कि ध्वनि गुणवत्ता को कायम रखते हुए सितार वाद्य में आवश्यकतानुसार नवीन प्रयोग उचित हैं|

विषय सूची

1. भारतीय संगीत में वाद्यों का विकास 2. सितार की आकृति एवं तार मिलाने की विभिन्न पद्धतियों का अध्ययन 3. ध्वनि गुणवत्ता बढाने में उपयोगी तत्व 5. सितार वाद्य में ध्वनि गुणवत्ता को बढाने के लिए किए गए प्रयोग। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

474. सीमा रानी
श्री गणेश कलात्मक अध्ययन।
निर्देशिका : डॉ. अमरगीत चन्डौक
Th 22203

विषय सूची

1. गणेश परिचय (धार्मिक महत्ता) 2. विभिन्न आयामों में गणेश के कलात्मक स्वरूप की प्रतीकात्मक अभिव्यक्तियाँ 3. मूर्तिकला में गणेश 4. चित्रकला में गणेश 5. भारत की कतिपय कलाविधिकाओं में गणेश। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची । चित्र सूची।

475. सुरेन्द्र कुमार
सामाजिक चेतना एवं सांस्कृतिक उतकृष्टता की दृष्टि से भोजपूरी लोकनाट्यः एक समीक्षात्मक अध्ययन(पूर्वाचँल के संदर्भ में)
निर्देशिका : प्रो. मधुबाला सक्सेना
Th 22206

विषय सूची

1. लोक एवं लोकनाट्य 2. समाज और संस्कृति का अन्तःसंबंध 3. भोजपुरी लोकनाट्यों के प्रकार 4. भोजपुरी लोकनाट्य में प्रयुक्त गेय-विधाएं 5. समाज एवं संस्कृति के उत्थान की दृष्टि में भोजपुरी लोकनाट्य। चित्रावली। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

476. सूरज
हरियाणवी रागनी का विश्लेषणात्मक अध्ययन।
निर्देशिका : प्रो. अनुपम महाजन
Th 22633

विषय सूची

1. हरियाणा एक परिचय 2. रागनी की पृष्ठभूमि 3. सांग के इतिहास का क्रमिक विकास एवं सांगी 4. रागनी में आए बदलाव 5. सांग की अभिव्यक्ति के घटक। परिशिष्ट। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची ।